अंतरराष्ट्रीय परिसंवाद

हिंदी साहित्य और जनसंचार माध्यम

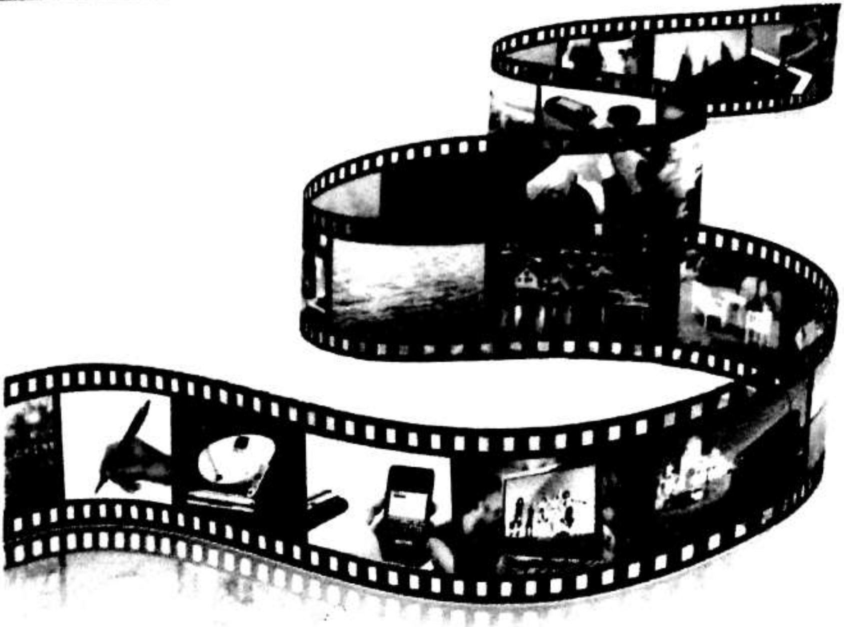

चांदमल ताराचंद बोरा महाविद्यालय

शिरुर, जि. पुणे महाराष्ट्र, भारत

Scanned by CamScanner

ISBN : 978-1-63102-967-7

मुद्रक एवं प्रकाशक

मा. प्राचार्य

चांदमल ताराचंद बोरा महाविद्यालय, शिरुर,

जि. पुणे, महाराष्ट्र (भारत)

दूरध्वनि क्र. 02138-222301, 224170

वेब : www.ctboracollege.org

ई–मेल : ctborainfo68@gmail.com

ctborainfo@redifmail.com

पहला संस्करण : 2014

मूल्य : ₹ 450

© चांदमल ताराचंद बोरा महाविद्यालय, शिरुर, जि. पुणे, महाराष्ट्र (भारत)

First Edition : 2014

Price : ₹ 450

प्रकाशित रचनाओं के विचारों से संपादक मंडल का सहमत होना जरूरी नहीं है।

Scanned by CamScanner

131	मीडिया और साहित्य	सुनिता पठारे	389
132	वर्तमान हिंदी कहानियों में समाज और व्यवस्था	पुष्पा मापारी	390
133	मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास में कामकाजी स्त्रियों का संघर्ष	प्रा. संजीवनी नाईक	393
134	विज्ञापनो में हिंदी	डॉ.सिध्देश्वर गायकवाड	395
135	विज्ञापनों में हिंदी	प्रा.साहेबराव गायकवाड	398
136	मीडिया, समाज और हिंदी	डॉ. एफ. एम. शाह	400
137	हिंदी प्रचार–प्रसार में मीडिया का योगदान	अमोल चव्हाण	404
138	विविध संचार माध्यम और हिंदी	डॉ. राजेंद्र बाविस्कर	406
139	वर्तमान हिंदी कहानियों में समाज और व्यवस्था	प्रा. अनिल झोळ	411
140	हिंदी के प्रचार–प्रसार में मीडिया का योगदान	श्रीकांत जोशी	414
141	वैश्विक भाषाओं में हिंदी का स्थान	सोनाली थोरात	415
142	मीडिया महिलाओं के लिए एक रोजगार	डॉ. सविता सिंह	417
143	संचार माध्यमों की अग्रणी भाषा–हिंदी	डॉ. के. डी. कलसरीया	422
144	विविध संचार माध्यम और हिंदी	प्रा. मेरूभाई एस. वाला	425
145	दृश्य–श्राव्य माध्यम एवं हिंदी	डॉ. मेरगसिंह ए.यादव	427
146	जनसंचार माध्यमों में हिंदी की भूमिका	डॉ. सी. एल. गोसाई	430
147	कम्प्यूटर और हिंदी	डॉ. हनुमंत जगताप	432
148	विज्ञापनों मे प्रयुक्त हिंदी : दशा और दिशा	डॉ.संजीवकुमार नरवाडे	435
149	वर्तमान हिंदी उपन्यासों में समाज और व्यवस्था	प्रा. प्रदीप सरवदे	437
150	राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रति मीडिया का दायित्व	भावना श्रीवास	440
151	हिंदी साहित्य में मूल्यों की अभिव्यक्ति	प्रा. मधुकर देशमुख	441
152	वर्तमान हिंदी कहानियों में समाज और व्यवस्था	डॉ. संतोष रायबोले	444
153	डॉ. श्रीराम परिहार के निबंधों में मूल्यों की अभिव्यक्ति	श्री बाबासाहेब माने	448
154	रामदरश मिश्र के उपन्यासों में समाज–व्यवस्था	प्रा. बेबी कोलते	452
155	पत्र–पत्रिकाओं का हिंदी भाषा के विकास में योगदान	प्रा. मंगल ससाणे	454
156	हिंदीः लोकल से ग्लोबल वाया मार्केट–मीडिया	डॉ. विजयकुमार रोडे	456
157	वैश्वीकरण, संस्कृति और हिंदी साहित्य	राजश्री नगरकर	458
158	वर्तमान हिंदी कथा साहित्य	विजय हनबर	460
159	भारतीय साहित्य और सिनेमा	प्रा.बबनराव झावरे	463
160	पत्रकारिता और हिंदी	के. व्ही. कृष्णमोहन	464
161	वर्तमान हिंदी नाटकों में सामाजिकता	सविता पिसाळ	466

Scanned by CamScanner

डॉ. श्रीराम परिहार के निबंधों में मूल्यों की अभिव्यक्ति

इक्कीसवीं सदी का हिंदी साहित्य विविधताओं से युक्त है। सदी के आरंभ से ही साहित्य के लिए नव–नवीन विषय मिलने लगे थे। चूँकि सदी का आरंभ जिस धुमधाम से हुआ, उसी तरह से विविध समस्याओं का आविष्कार भी बड़ी तेजी से हुआ है। परिणाम स्वरुप हिंदी साहित्य में नए विषय आने लगे हैं। सदी के मुहाने पर भारतीय समाज में अनेक परिवर्तन आए हैं। इन परिवर्तनों में समाज जीवन की बेहतरी के लिए कई परिवर्तन बहुत सही प्रतीत होते हैं, जैसे कि भौतिक सुख–सुविधाओं का प्रचलन, ऊँचा रहन–सहन, इंन्फरमेशन तकनीकी का प्रसार, जल के संचयन हेतु बनाए गए बडे–बडे बाँध, कल कारखानों का विकास, रास्तों का विकास, संगणक का विकास आदि। परंतु इन परिवर्तनों के अतिरिक्त कई ऐसे परिवर्तनों को प्रचलन भी भारतीय समाज में बढ़ गया है, जो उसके जीवन को विनाश की ओर ले जा रहे हैं। ऐसे अनावश्यक परिवर्तनों में से एक है– जीवन मूल्यों का ह्रास। भारतीय समाज जीवन में मूल्यों का ह्रास बडी तेजी से होने लगा है सत्य, अहिंसा, शांति, त्याग, सदभाव, संयम, समता, बंधुता, परोपकार, परदुःखकारता, आत्मीयता, नैतिकता, राष्ट्रीयता, समाजसेवा, आदि नैतिक मूल्यों की जगह अब असत्यता, हिंसा, लूट–खसोट, शोषण, धोखा–धड़ी, चाटुकारिता, भ्रष्टाचार, संकुचित वृत्ति, अनैतिकता तथा स्वार्थी वृत्ति आदि दुर्गुणों ने जगह पा ली है। साहित्यकार अपने साहित्य के माध्यम से समाज में आए अनावश्यक बदलावों को बखूबी प्रस्फूटित करते हैं और समाज को आदर्श राह पर चलने के लिए कई मार्ग भी प्रशस्त करते हैं। हिंदी के विविध साहित्यकारों ने समाज के हर अंग को परखा है। उन्हें पता चला है कि आज का समाज मूल्यों को पुरी तरह भूलता जा रहा है। इसलिए साहित्यकारों ने समाज के दवारा नष्ट होते जा रहे जीवन मूल्यों को गंभीरता से अपने साहित्य में वाणी दी है। ताकि समाज में जीवन मूल्यों का पुनः रोपन हो जाए और मनुष्य जीवन सार्थक हो जाए।

इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य पर जब हमारी नजर जाती है तो पता चलता है कि जिस तरह से उपन्यास, कहानी और कविता में मूल्यों की अभिव्यक्ति को प्रधानता मिल चुकी है, उसी तरह से निबंध साहित्य में भी मूल्यों पर गंभीर चिंतन–मनन मिलता है। हिंदी के अनेक निबंधकारों ने भारतीय जन–जीवन से गायब होते मूल्यों पर गहराई से सोचा है और उन मूल्यों को पुनः समाज में रोपित करने की कोशिश की है। इन निबंधकारों में प्रमुखतः से विद्यानिवास मिश्र, विवेकीराय, विश्वनाथ प्रसाद, रामनारायण उपाध्याय, कृष्णबिहारी मिश्र, शामसुंदर दुबे तथा डॉ. श्रीराम परिहार का नाम लिया जाता है। डॉ. श्रीराम परिहार ने इक्कसवीं सदी के अपने निबंधों में समाज के दवारा हाशिए पर चले गए मूल्यों पर बखूबी सोचा है और उन मूल्यों को जीवन में उतारने की पाक नसीहत भारतीय समाज को दी है। अतः यहाँ पर डॉ. श्रीराम परिहार के इक्कीसवीं सदी में प्रकाशित निबंधों में अभिव्यक्त मूल्यों की अभिव्यक्ति पर प्रकाश डाला जा रहा है। उनके 'रसवंती बोलो तो' (२००२), 'हंसा कहो पुरातन बात' (२००६), 'भय के बीच भरोसा' (२०१०) आदि निबंध संग्रह इक्कीसवीं सदी में प्रकाश में आए हैं। इन संग्रह के निबंधों में बीसवीं सदी के उत्तरार्ध और इक्कीसवीं सदी के शुरुआती दौर के बदलावों, समस्याओं और मूल्यों की गिरावट पर गहन–गंभीर चितंन मिलता है। अतः उनके निबंधों में व्यक्त मूल्यों को निम्न तरह से देखा जा सकता है।

इक्कीसवीं सदी में भी भारतीय समाज की हालत शोचनीय ही रह गई है। इसमें अनाचार–अत्याचार एवं शोषण ऊपरी रुप से भले ही न दिखता हो, चूँकि ऐसा करना कानून अपराध है, किंतु अप्रत्यक्ष रुप से अत्याचार एवं शोषण भारी मात्रा में हो रहा है। परिणाम स्वरुप विषमता की खाई बढ़ गई है। डॉ. श्रीराम परिहार ऐसी विषमता के खिलाफ हैं। वे समाज का समान विकास चाहते हैं। इसलिए उन्होंने 'महुआ झरे अबोल' नामक निबंध में आदिवासियों के हो रहे शोषण के खिलाफ आवाज उठाई है और देश के उन लोगों को फटकार लगाई है, जो इन आदिवासियों का ही नहीं, बल्कि संपूर्ण गरीब एवं लाचार तबकों का शोषण कर रहे हैं। उन्होंने आदिवासियों को महुए के समान सीधे, भले तथा प्रकृति की रक्षा में सहायक जीवों के रुप में माना है। उनके हो रहे शोषण के खिलाफ आवाज उठाते हुए निबंधकार लिखते हैं–"शोषण महुए के

Scanned by CamScanner

साथ जोंक की तरह चिपका है। इस लौह और जेट के युग में भी बस्तर और सरगुजा के महुए के कांधे से बंहगी और कांवड़ हटी नहीं। यह महुए की लाचारी है या युग के कुछ लाचार लोगों की बदमाशी। महुए की टोळी (महुए का फल) का तेल बाद में निकलता है, उससे पहले महुए की देह और श्रम का सारा तैल पढ़े–लिखे घोड़े पी जाते हैं।'' ' उक्त कथन से स्पष्ट है कि शोषण जैसी बीमारी को खत्म करके सभी का समान रुप में विकास करना और संपूर्ण भारतवर्ष में सामाजिक, आर्थिक और जातीय समानता स्थापित करना जीवन का उच्यतम् मूल्य ही है। इस मूल्य को प्रभावी रुप में अमल में लाने एवं उसकी रक्षा करने में ही सबकी भलाई है। इसी तरह का संदेश डॉ. परिहार ने पाठकों को दिया है। दूसरी जगह पर उन्होंने कहा है कि मनुष्य जीवन में अर्थ को भी मूल्य माना गया है परंतु गलत तरीके से अर्थ कमाना नैतिकता नहीं कहलाती। अतः अर्थ को ईमानदारी से प्राप्त करना और उसमें से थोड़ा–बहुत हिस्सा गरीबों को दान में देना जीवन का श्रेष्ठ मूल्य माना जाता है। गलत रास्तों को अपनाकर कमाया हुआ धन आपको कभी भी सुख नहीं देता है और ना ही चैन की नींद देता है। इस पर भाष्य करते हुए निबंधकार ने लिखा है– "जिसके पास गलत ढ़ंग से धन आता है, उस धन के जाने के रास्ते भी गलत होते हैं। गलत से अर्थ यह भी है कि उसका उपभोग बाजार निर्धारित करता है। वह निर्धारण कुछ ऐसा होता है कि व्यक्ति वस्तु का गुलाम हो जाता है। उसकी रातें अपनी नहीं होती। नींद अपनी नहीं होती। स्वप्न अपने नहीं होते। उसकी भोर बड़ी कसैली और खुमारी भरी होती है।''[7]

ऐसा भी नहीं है कि इक्कीसवीं सदी में सबकुछ गलत ही हो रहा है। वर्तमान सदी के मनुष्य के पास वे सारे साजो–समान आ रहे हैं, जो उसकी जिंदगी को बहुत आकर्षित भी करते हैं और फायदेमंद भी हैं। परंतु मनुष्य उनका गलत तरीके से इस्तेमाल कर रहा है। वह भौतिक सुख–सुविधाओं के खातिर जीवन में अहम माने जानेवाले मूल्यों की बजाए , धोखा–धड़ी, ईर्षा, खून–खराबा, दमन, छल–कपट, भ्रष्टाचार आदि दुर्गुणों से काम ले रहा है। जहां उसका जीवन ऐशो–आराम के साधनों से युक्त हो गया है, वहीं यांत्रिकता, भौतिकता और धन की लालसा ने उसके जीवन में घूटन, संत्रास और एकाकीपन पैदा किया है। यह संपूर्ण मानव जीवन के लिए नुकसानदेह बात है। अहिंसा को मनुष्य जीवन का उच्चतम् मूल्य माना गया है 'अहिंसा परमो धर्मः' की उक्ति इसलिए चरितार्थ हुई है कि मनुष्य अहिंसा का पालन करे। उसे अपने जीवन में उतारकर सभी को सुरक्षित रख सके और अपने आप में भी सुरक्षा का भाव महसूस कर सके। अहिंसा से ही सही मायने में मानव धर्म की रक्षा होती है। धर्म का असली अर्थ अहिंसा के पालन से ही स्पष्ट होता है। परंतु आज के जमाने में 'अहिंसा' शब्द केवल कहने एवं भाषण में बोलने के लिए रह गया है वर्तमान मनुष्य पशु–पक्षियों, पेड़–पौधों, लताओं और वेलियों की ही नहीं, बल्कि अपने समान दूसरे मनुष्य की भी हिंसा अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए कर रहा है। आजकल हम देखते हैं कि गाय जैसे सीधे, शालीन, पवित्र तथा उपयोगी पशुओं की हत्या का सिलसिला साल–दर–साल बढ़ता ही जा रहा है। अतः निबंधकार गाय की हत्या न करने की सलाह समाज को देते हैं। वें गाय की हत्या के ही नहीं, बल्कि संपूर्ण प्राणी मात्र की हिंसा के क्यों खिलाफ है ? इसे स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि –"हिंसा गाय की ही क्यों निषिध्द है ? जबकि प्राणी मात्र के कल्याण और रक्षा की बात मानव–धर्म कहता है।''[8]

मनुष्य का धर्म यह है कि वह अपने साथ–साथ अन्य प्राणियों की रक्षा में भी सहयोग दे। ताकि पर्यावरण संतुलन बना रहे और भविष्य में आनेवाली पीढ़ियों का जीवन सुरक्षित हो जाए। किंतु वर्तमान में मनुष्य चंद रुपयों के खातिर तथा अपनी अंधी हवस को पूरा करने के लिए गाय जैसे अनेक पशुओं की हत्या करके रुपये जुटाता जा रहा है। उसकी हत्या करना कहां का धर्म है ? गाय तो हमारे यहां अनेक कारणों से पूज्य मानी जाती है। अतः उसकी पवित्रता पर निबंधकार के विचार हैं कि "गाय में मॉ की सीधाई, ममत्व, त्याग, पवित्रता, तप, दया और सत्य साक्षात हैं। गौ विश्व की माता है।''[9] उक्त कथन से स्पष्ट है कि गाय जैसे पशुओं के माध्यम से हमें ममत्व,

Scanned by CamScanner

त्याग, दया और सत्य जैसे मूल्य मिल जाते हैं। अतः उनकी हिंसा करना या अपनी गंदी हवस को पूर्ण करने हेतु उनका वध करना सरासर गलत है। अहिंसा जैसे उच्च मूल्य को हर हाल में अपने जीवन में उतारना चाहिए और निरंतर अहिंसात्मक मार्ग पर चलने की कोशिश करनी चाहिए। इस संदर्भ में दूसरी एक जगह पर निबंधकार ने स्पष्ट किया है कि हिंसा करने से किसी भी धर्म की रक्षा नहीं होती । इस तथ्य को स्पष्ट करते हुए निबंधकार लिखते हैं कि "नहीं समझ में आता कि व्यक्तियों को जिंदा जला देने से धर्म के किस अंग की रक्षा होती है ? या अभी तक हो सकी है ? हिंसा न तो धर्म का स्वभाव है और न ही लक्ष्य। जब यह दोनों ही नहीं है, तब यह तय हो जाता है कि हिंसा करने वालों का कोई धर्म नहीं है।"[5] जहां एक ओर निबंधकार ने हिंसा करने वालों को अधर्मी सिध्द किया है, वहीं दूसरी ओर वे साहित्य एवं संस्कृति में रची–बसी हुई जाति के धर्म को मानवता का श्रृंगार घोषित करते हैं और लिखते हैं कि– "साहित्य–संस्कृति में रची और डूबी हुई जाति का धर्म, हिंसा के खून की बूंदों से अपने होठ तर नहीं करता है। वह ऑसुओं से दर्द को धोता है और मुस्कान से मानवता का श्रृंगार करता है।"[6] इससे स्पष्ट है कि धर्म मानवता को वृदधिगंत करने एवं सभी के दुःख–दर्दों को दूर करने के लिए होता है, न कि खून करने के लिए।

इसके अतिरिक्त डॉ. परिहार ने प्रेम जैसे आवश्यक मूल्य को भी आज के जमाने लिए आवश्यक बताया है। उन्होंने 'प्रकृति और पुरुष की आदिम प्रेम–कथा' नामक निबंध में प्रेम के मूल्य को अभिव्यक्ति प्रदान की है। उनका कहना है कि महजब एवं सियासत के नाम पर परस्पर भेदभाव करना एवं एक–दूसरे के प्रति घृणास्पद व्यवहार करना सर्वथा गलत है। जों लोग इस तरह का कार्य करते हैं उनका हृदय परिवर्तन करने का कार्य प्रेम ही करता है। इस संदर्भ में उनका कथन है कि "मजहब और सियासत के लाखों मील लंबे फैले रेगिस्तान में जलते हुए पॉवों में इश्क मरहम लगता है।"[7] इश्क अथवा प्रेम में सबसे भारी ताकत होती है। वह बडे–बडे विनाश को भी टालने की ताकत रखता है। उसे हम धन से कभी भी खरीद नहीं सकते। इसको स्पष्ट करते हुए निबंधकार लिखते हैं–"प्रेम सबसे भारी है। भगवान से भी भारी। क्योंकि प्रेम ईश्वर को भी वश में कर लेता है। धन से सबकुछ खरीदा जा सकता है, प्रेम नहीं।"[8] आज की सदी को प्रेम, भाईचारा, ईमानदारी, त्याग, विश्वबंधुता आदि मूल्यों की खासकर जरुरत है। उसके पास पूरी दुनिया में घूमने और उसकी सारी जानकारी तुरंत हासिल करने के सभी साधन मौजूद हैं। परंतु विश्व–बंधुत्व की भावना की कमी है। वह बौद्धिक और शारीरिक रुप से तो बहुत आसानी से विश्व के साथ जुड़ सकता है। किंतु आत्मीक रुप से वह दुनिया के साथ नहीं जुड पा रहा है। जबकि आत्मीक रुप से दुनिया के साथ जुड़ने से ही तो विश्वबंधुत्व जैसे मूल्य की स्थापना सार्थक सिध्द होती है। अतः निबंधकार को लगता है कि भले ही नई सदी आत्मीक रुप से आज दुनिया के साथ जुड़ी हुई नहीं है, लेकिन एक दिन ऐसा आएगा कि वह विश्वग्राम के बीच में रहकर विश्वमानव के साथ निश्चित रुप से जुड़ जाएगी और यह विश्वमानव, विश्वबंधुत्व के पवित्र भाव से सन्निहित होगा। इसे उजागर करते हुए वे लिखते हैं "सदी का स्वप्न है कि विश्वग्राम के बीच से ही विश्वमानव पैदा होगा। इस विश्वमानव की जमीन पदार्थवाद से भरी हुई न होकर विश्वबंधुत्व के भावों से ठोस होगी। सदी के गंदले कमरे से हवा में तैरती हुई जो चिट्ठी नयी सदी के विश्वमानव को मिली है, उसके शब्द–शब्द से नेह के झरने फूट पड़े हैं।"[9]

डॉ. परिहार ने विज्ञान की प्रगति के साथ–साथ मूल्यों को भी सामाजिक विकास में अहम माना है। उनका मानना है कि विज्ञान के कारण अनेक आविष्कार हो चुके हैं और आज भी हो रहे हैं। इसके परिणाम स्वरुप मानव जीवन में अमुलाग्र परिवर्तन आ चुका है। विज्ञान से ही अनेक शस्त्र–अस्त्रों की निर्मिति हो चुकी है। परंतु इन शस्त्र–अस्त्रों का दुरुपयोग अधिक हो रहा है। शस्त्रों को खोज निकालना यह ज्ञान और विज्ञान का कमाल है, पंरतु ज्ञान एवं विज्ञान पर मूल्यों का नियंत्रण भी उतना ही जरुरी है। जितना कि ज्ञान का विज्ञान पर होता है। तभी मानवता का विकास एवं प्रगति चीरकाल तक होती रहेगी। इस संदर्भ में वे कहते हैं कि "ज्ञान और मूल्य आपस

Scanned by CamScanner

में भाई–भाई हैं। जब तक यह भाईचारा बना रहता है। तब तक ज्ञान, विज्ञान को सही दिशा देते हुए शिवत्व की ओर बढ़ाता रहता है।" [१०] जहां डॉ. परिहार विज्ञान पर मूल्यों के दवारा अंकुश लगाने की बात करते हैं, वहीं वे पूरी दुनिया की हालत पर चिंतन करते हुए लिखते हैं कि आज दुनिया में अनेक देश ऐसे हैं, जो परस्पर लड़ रहे हैं। उनमें अनेक कारणों से लेकर लड़ाइयाँ हो रही हैं। कभी अर्थ के कारणवश तो कभी धर्म के कारणवश उनमें अनबन होती ही रहती है। ऐसे में भारतीय समाज जीवन में उच्च माने जानेवाले मूल्य शांति प्रस्थापित करने में सहायक हो सकते हैं। इसी तरह का संदेश परिहार जी ने वर्तमान समाज को दिया है। यथा– "विश्व शांति में भी व्यापक स्तर पर भारतीय जीवन मूल्य (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) महती भूमिका निर्वाह कर सकते हैं। आज के विश्व के अनेक राष्ट्र अनंत और अपार इच्छाओं की पूर्ति में अर्थ और काम की अमर्यादित दिशाओं में दौड़ रहे हैं। यह मानव–सृष्टि के लिए आत्मघाती है। जीवनमूल्यों की महत्ता को पुनः स्थापित करना आवश्यक हो गया है" [११]

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि डॉ. श्रीराम परिहार एक ऐसे निबंधकार हैं कि जिन्होंने अपने निबंधों के माध्यम से भारतीय समाज में मूल्यों को पुनर्जीवित करने की अपनी ओर सफल कोशिश की है। उनका निबंध संसार 'सर्वे भवंतु सुखिनः सर्वे संतु निरामयाः' की उक्ति को उजागर करता है और संपूर्ण मानवजाति का कल्याण करने की कामना को चरितार्थ करता है।

संदर्भ

१) रसवंती बोलो तो– डॉ. श्रीराम परिहार, पृ. २१

२) भय के बीच भरोसा– डॉ. श्रीराम परिहार, पृ. २३

३) वही, पृ. ०६

४) वही, पृ. १०

५) वही, पृ. १६

६) वही, पृ. १८

७) हंसा कहो पुरातन बात– डॉ. श्रीराम परिहार, पृ. २९

८) वही, पृ. ४६

९) वही, पृ. ३९

१०) वही, पृ. ५१

११) वही, पृ. ५३

श्री बाबासाहेब माने

अध्यक्ष, हिंदी विभाग,

श्री शिव छत्रपति महाविद्यालय, जुन्नर, पुणे

दूरभाष : ०९८९०७३०५८३

Scanned by CamScanner